कुमार गोन्सुसाब व अन्य

बनाम

श्री मोहम्मद मिया उर्फ बाबन व अन्य

(दीवानी अपील संख्या 157/2001)

निर्णय दिनांक 19 अगस्त 2008

(माननीय न्यायाधिपति श्री तरूण चटर्जी तथा श्री पी.सतशिवम)

मुस्लिम विधि धारा 226 तथा 232 सामीप्य के आधार पर हक-शुफा का दावा- संपति के बेचान के करार के आधार पर - दावे की पोषणीयता -अर्भिनिर्धारित किया गया कि चुंकि दावा प्रस्तुत करने का वाद कारण उत्पन्न नहीं हुआ अतः दावा पोषणीय नहीं है। वाद कारण ऐसी स्थिति में ही उत्पन्न होता है, जबकि दावा का सम्पति का वास्तव में बेचान हो गया हो ना कि ऐसी स्थिति में जबकि बेचान बाबत केवल करार किया गया हो- संपति अन्तरण अधिनियम, 1882 - धारा 54।

हक शुफा - हक शुफा का अधिकार - अधिकार की प्रकृति - अभिनिर्धारित किया गया कि उक्त अधिकार कमजोर प्रकृति का है- हक शुफा का अधिकार का दावा करने वाले व्यक्ति के पक्ष में साम्य विद्यमान नहीं है - न्यायालय मात्र साम्य के आधार पर हक शुफा का दावा करने वाले व्यक्ति को सीमा से बाहर जाकर अनुतोष प्रदान नहीं कर सकते।

वर्तमान प्रकरण में विचारणीय बिंदु यह था कि क्या ऐसी स्थिति में जबकि दावाकृत संपति के संबंध में पक्षकारों के मध्य केवल बेचान का करार निष्पादित हुआ था, क्या सामीप्य के आधार पर हक शुफा का दावा पोषणीय है।

न्यायालय द्वारा अपील स्वीकार करते हुए अभिनिर्धारित किया गया कि-

1.1 मुस्मिल विधि की धारा 226 तथा 232 यह पूर्णतया स्पष्ट करती है कि किसी स्थावर संपत्ति के स्वामी के पक्ष में हक शुफा का अधिकार उसी स्थिति में उत्पन्न हो सकता है, जबकि किसी अन्य स्थावर संपत्ति को किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बेचा गया हो। धारा 226 मुस्लिम विधि यह दर्शाती है कि हक शुफा के अधिकार की उत्पत्ति संपत्ति का बेचान किये जाने पर ही उत्पन्न होती है। इस स्वीकृत तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी क्रम 03 द्वारा दावाकृत संपति के संबंध में अपीलार्थी संख्या 1 तथा 2 के पक्ष में केवल बेचान का करार निष्पादित किया गया था, प्रत्यर्थियों द्वारा हक शुफा के अधिकार का दावा किये जाने का कोई प्रश्न उत्पन्न नही होता है। विक्रय के करार के आधार पर प्रस्तुत किया गया हक शुफा का दावा, वाद कारण से विरत अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए, क्योंकि प्रत्यर्थीयों के पक्ष में हक शुफा का ऐसा कोई अधिकार उत्पन्न नहीं

हुआ था, जिसे कि विधि द्वारा प्रवर्तित किया जा सके (पैरा क्रमांक 10 व 11) (235, जी-एच; 234,डी)

1.2 सपंत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 54 यह प्रावधित करती है कि विक्रय का करार स्वतः ही किसी स्थावर संपत्ति पर कोई अधिकार या भार उत्पन्न नहीं करता है। अतः जहां पर पक्षकारों द्वारा मात्र विक्रय का करार किया गया हो ऐसी स्थिति में क्रेता के पक्ष में दावाकृत संपत्ति से संबंधित कोई अधिकार उत्पन्न नहीं होता है तथा विक्रय पूर्ण होने पर क्रेता को संबंधित संपत्ति का स्वामित्व वैध रूप से स्थानान्तरित नहीं होता है, अतः हक शुफा के अधिकार को प्रवर्तित कराने का कोई अधिकार भी उत्पन्न नहीं होता है। अतः ऐसे करार के आधार पर प्रस्तुत किया गया हक शुफा का दावा वाद कारण से विरत था, क्योंकि प्रत्यथीर्यों के पक्ष में हक शुफा का ऐसा कोई अधिकार विद्यमान नही था, जिसे कि विधि द्वारा प्रवर्तित किया जा सके।(पैरा 11) (234, बी-डी)

राधा कृष्ण लक्ष्मीनारायण तोषनीवाल बनाम श्रीधर रामचन्द्र अलशी व अन्य एआईआर 1960 एससी 1368 - अनुसरित किया गया।

1.3 यदि अन्ततः विक्रयनामा निष्पादित कर दिया जाता है, तो प्रत्यर्थीगण को दावाकृत संपति पर हक शुफा का दावा प्रस्तुत करने की

स्वतंत्रता होगी, यदि वे विधि के अनुसार हक शुफा का दावा प्रस्तुत करने हेतु अनुमत हो।(पैरा 15) (235, ई)

2. हक शुफा के दावाकर्ता, जिसका एक मात्र उद्देश्य विधि द्वारा उसमें निहित अधिकारों के जरिये एक वैध संव्यवहार को विचलित करना मात्र हो, उसके पक्ष में साम्य की उत्पत्ति नही होती, जिस व्यक्ति के विरूद्ध हक शुफा का दावा किया गया है वह इस बात के लिये स्वतंत्र होता है कि वह हक शुफा कि विधि को किसी अन्य वैध साधन से परास्त कर सके, जो कि क्रेता या विक्रेता द्वारा छल न हो तथा कोई व्यक्ति वैध साधनों के उपयोग से हक शुफा की विधि को परिवर्जित करने का अधिकारी है। हक शफ़ुा का अधिकार एक कमजोर प्रकृति का अधिकार है तथा न्यायालयों द्वारा उक्त अधिकार को बढ़ावा नहीं दिया जाता है तथा ऐसी स्थिति में हकशुफा के अधिकार के दावाकर्ता को न्यायालय द्वारा परिपाटी से हटकर सहायता प्रदान नहीं की जा सकती है। [पैरा 11 व 12] [234, एच; 235, ए-बी]

राधा कृष्ण लक्ष्मीनारायण तोषनीवाल बनाम श्रीधर रामचन्द्र अलशी व अन्य एआईआर 1960 एससी 1368 - अनुसरित किया गया।

संदर्भित निर्णय विधि

एआईआर 1960 एसी 1368 संदर्भित पैरा संख्या 11 व 12

दिवानी अपीलीय अधिकारिताः सिविल अपील संख्या 157/2001।

कर्नाटका उच्च न्यायालय, बैंगलोर द्वारा आर.एस.ए संख्या 831/1996 में पारित अंतिम निर्णय तथा आदेश दिनांकित दिनांक 05-11-1998।

शंकर दिवाते वास्ते अपीलार्थी के लिए।

आर.एस. हेगडे, पी.पी. सिंह, एम. कमरूद्दीन और इरशाद अहमद वास्ते प्रत्यर्थीगण के लिए।

न्यायालय के निर्णय तरूण चटर्जी जी द्वारा सुनाया गया।

1. वतर्मान अपील कर्नाटका उच्च न्यायालय बैंगलोर द्वारा आरएसए संख्या 831/1996 में पारित निर्णय तथा डिक्री दिनांकित 05 नवम्बर 1998 के विरूद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों द्वारा दायर द्वितीय अपील को अनुज्ञात किया गया था तथा अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया गया था और वाद को व्यय सहित डिक्री किया गया था।

2. पक्षकारों द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों के साथ-साथ उच्च न्यायालय के समक्ष जो विवादास्पद प्रश्न उठाया गया था, वह यह था कि क्या सामीप्य के आधार पर हकशफा का कानून शून्य है, जैसा कि इस न्यायालय ने भाऊ राम बनाम बी. बैजनाथ सिंह (1962 उपर 3 एससीसी 724) और संत राम और अन्य बनाम लाभ सिंह और अन्य (1964 (7)

एससीआर 756) के मामले में अभिनिर्धारित किया था। हालांकि, अधीनस्थ अदालतों के फैसलों को दरकिनार करते हुए, उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपील में यह अभिनिर्धारित किया कि संविधान के संशोधन को देखते हुए हकशुफा के कानून को अमान्य और असंवैधानिक नहीं ठहराया जा सकता है।

3. मोहम्मद. इस्माइल उर्फ बादशाह-वादी नंबर 1 (मृतक) और मोहम्मद मियां उर्फ बबनवादी संख्या. 2 के द्वारा हामेदाबेगम (प्रतिवादी नं. 1/अपीलार्थी नं. 3) पत्नी मोहम्मद यूसुफ मणियार और कुमार गोंसुसाब के विरुद्ध (प्रतिवादी नं. 2/अपीलार्थी नं. 1) और कुमार शफी मोहम्मद (प्रतिवादी नं. 3/अपीलार्थी संख्या. 2)के विरूद्ध स्थायी निषेधाज्ञा का दावा अपीलार्थियों को हकशुफा के आधार पर वाद संपत्ति से संबंधित विक्रय विलेख निष्पादित करने से विरत करने के क्रम में तथा कर्नाटक राज्य में धारवाड़ के कलघटगी तालुक के मिश्रीकोटी गांव में स्थित 6 एकड़ 31 गुंटा आर. एस. संख्या 164/3 बी को क्रय करने तथा अन्य अनुतोष प्राप्त करने के संबंध में प्रस्तुत किया गया था। इस स्थान पर यह उल्लेख किया जा रहा है कि मूल वादी संख्या 1, अर्थात्, मोहम्मद. इस्माइल उर्फ बादशाह की कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी और उनके उत्तराधिकारियों और विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाया गया।

वतर्मान निर्णय में, वादी को प्रतिवादी के रूप में उल्लेखित किया गया है और प्रतिवादियों को अपीलार्थी के रूप में उल्लेखित किया गया है।

4. प्रत्यर्थियों द्वारा दायर किये गये प्रकरण के संक्षिप्त तथ्य निम्न प्रकार से है-

वादग्रस्त संपति प्रत्यर्थियों के परिवार की पैतृक संपत्ति थी, जो कि सह-हिस्सेदारों के बीच उप विभाजित की गयी थी। अपीलार्थी संख्या 03 हमीदा बेगम प्रत्यर्थियों के परिवार में जन्मी थी तथा उक्त संपत्ति उसे विवाह में दी गयी थी। प्रत्यर्थीगण वादग्रस्त संपत्ति के सटी हुयी संपत्ति के स्वामी थे तथा वे सामीप्य के आधार पर वादग्रस्त संपत्ति में हक शुफा के अधिकारी थे। अपीलार्थी सं. 3 द्वारा 12 फरवरी, 1987 को वादग्रस्त संपत्ति को अपीलार्थी सं. 1 तथा 02 को विक्रय करने के लिये एक पंजीकृत इकरारनामा निष्पादित किया गया था। प्रत्यर्थियों द्वारा मुस्लिम विधि और पारिवारिक रिति-रिवाजों के अधीन सामीप्य के आधार पर वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में हकशुफा का दावा किया गया था। चूकि वादग्रस्त संपत्ति को दिनांक 12 फरवरी 1987 को निष्पादित किये गये उक्त पंजीकृत विक्रय करार के आधार पर दिनांक 19 फरवरी, 1987 को अपीलार्थीयों द्वारा स्वयं के नाम नामांतरित करवाने का प्रयास किया गया, तब प्रत्यर्थीगण को अपीलार्थीयों की वादग्रस्त सम्पत्ति के पंजीकृत विक्रय विलेख के आधार पर बेचान के आशय की जानकारी होने पर उनके द्वारा सामीप्य के आधार पर

हकशुफा के अधिकार को प्रभाव में लाने का उनका आशय अभिव्यक्त किया गया। चूंकि अपीलार्थी संख्या 03 ने वादग्रस्त सम्पत्ति को प्रत्यर्थीयों को बेचने से इंकार कर दिया गया था। इस कारण वे अपीलार्थी संख्या 01 व 02 के पक्ष में विक्रय विलेख का निष्पादन करने से अपीलार्थी संख्या 03 को रोकने के लिये स्थायी निषेधाज्ञा का वाद सामीप्य के आधार पर हकशुफा का दावा करते हुए प्रस्तुत करने हेतु विवश हुए थे।

5. प्रकरण में उपस्थित देने के बाद, वाद पत्र में किये गये तात्विक अभिकथनों से इंकार करते हुए अपीलार्थी संख्या 01 लगायत 3 ने लिखित कथन पेश किये। हालांकि उनके द्वारा यह स्वीकार किया गया कि प्रत्यर्थीगण वादग्रस्त सम्पत्ति की सटी हुयी भूमि के स्वामी है तथा अपीलार्थी संख्या 01 व 02 के पक्ष में अपीलार्थी संख्या 03 हमीदा बेगम द्वारा विक्रय करार किये जाने के तथ्य को भी स्वीकार किया है। लिखित कथन में यह अभिकथित किया गया था कि चूंकि अपीलार्थी संख्या 03 वादग्रस्त संपत्ति की मालिक है अतः अपने पसन्द के व्यक्ति को उक्त संपत्ति को बेचने का पूरा अधिकार रखती है, इस कारण अपीलार्थी के विरूद्ध स्थायी निषेधाज्ञा का वाद निरस्त किये जाने योग्य है।

6. विचारण न्यायालय द्वारा निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए थेः

"(i) आया वादीगण को प्रतिवादी संख्या 1 के द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 व 3 के पक्ष में निष्पादित आशयित विक्रय विलेख पर हक शुफा का अधिकार है ?

(ii) आया वादीगण सभी प्रतिवादियों के विरूद्ध हक शुफा के अधिकारी है?

(iii) आया प्रतिवादी संख्या 1 और 3 प्रत्येक क्षतिपूर्ति के तौर पर रूपये Rs.3000/- की राशि प्राप्त करने के अधिकारी हैं ?

(iv) आया हकशुफा का कानून कर्नाटक राज्य में तथा विशेष रूप से कृषि भूमि पर लागू नहीं होता है ?

(v) आया न्यायालय शुल्क का भुगतान सम्यक है ?

(vi) न्यायालय द्वारा अपेक्षित आदेश अथवा डिक्री ?"

7. विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक विरचित किये जाने के पश्चात् और पक्षकारान को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान किये जाने के पश्चात् और प्रस्तुत की गयी साक्ष्य व अभिलेख पर विद्यमान सामग्री तथा भाऊ राम बनाम बी. बैज नाथ सिंह (ऊपर) और संत राम बनाम लाभ सिंह (ऊपर) में प्रतिपादित विधि पर विचार करने के बाद यह अभिनिर्धारित करते हुए वाद खारिज कर दिया कि सामीप्य के आधार पर हक शुफा का

कानून असैंवाधिनक तथा शून्य था। विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी संख्या 01 व 02 के पक्ष में वादग्रस्त सम्पत्ति में कोई हित, विक्रय करार उत्पन्न नहीं कर सकता तथा इसके आधार पर हक शुफा के अधिकार का प्रश्न उत्पन्न नहीं हो सकता और इस उद्देश्य हेतु मुस्लिम विधि की धारा 232 पर विचारण न्यायालय ने अवलंबन लिया गया। प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थीगण द्वारा अपील प्रस्तुत की गयी और विचारण न्यायालय के निर्णय व डिक्री पर विचार करने के बाद और अभिलेख पर विद्यमान साक्ष्य पर पुनः विचारण कर निर्णय दिनांक 06-03-1996 के द्वारा अपील खारिज कर दी गयी। अधीनस्थ न्यायालय के निर्णय की पुष्टि के आदेश के विरूद्ध प्रत्यर्थीगण द्वारा द्वितीय अपील प्रस्तुत की गयी जिसे आलौच्य निर्णय के जरिये यह अभिनिधार्रित करते हुए स्वीकार किया कि संविधान में हुए संशोधन की रोशनी में सामीप्य के आधार पर हकशुफा के कानून को असंवैधानिक तथा शून्य अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता। हालांकि उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय तथा अपीलीय न्यायालय द्वारा निर्णीत प्रकरण कि विक्रय के करार मात्र के आधार पर प्रस्तुत किया गया वाद, वाद-कारण रहत था, क्योंकि मुस्लिम विधि की धारा 232 के प्रावधानों के अनुसरण में प्रत्यर्थीयों के पक्ष में विधिकतया प्रवर्तनीय हक-शुफा का अधिकार उत्पन्न नहीं हुआ था, को अभिनिर्धारित नहीं किया गया। उच्च

न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालय के निर्णयों को अपास्त करते हुए यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि प्रत्यर्थीगण को हक शुफा का अधिकार प्राप्त था यदि अपीलार्थीगण द्वारा विक्रय के करार को प्रभावी किया जाता है, यदि नहीं तो निश्चित रूप से प्रत्यर्थीगण प्रभावित नहीं हुए थे और यदि विक्रय का करार विक्रय विलेख में परिणीत होने जा रहा था तो ऐसा विक्रय उपरोक्त प्रावधानों के विरोध में होना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए। उपरोक्त निष्कर्षों के साथ अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों और डिक्री को अपास्त कर दिया गया और दावा डिक्री किया गया। यह पुनः उल्लेखित किया जा रहा है कि उच्च न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालय के निर्णयों को अपास्त करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि सामीप्य के आधार पर हक शुफा का दावा संविधान के संशोधन की रोशनी में असंवैधानिक तथा शून्य नहीं माना जा सकता है।

08. उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये उपरोक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए हमारे समक्ष उठाये गये प्रश्नों पर विचार करने की और अग्रसर होते है। जहां तक सामीप्य के आधार पर हकशुफा के अधिकार की सवैंधानिकता का प्रश्न है हम पाते है कि उच्च न्यायालय जैसा कि पूर्व में अंकित किया जा चुका है, द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुस्लिम विधि के अनुसार सामीप्य के आधार पर हक शुफा का अधिकार संविधान के संशोधन की रोशनी में असंवैधानिक और शून्य नहीं कहा जा सकता।

जबिक अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा दो न्यायिक निर्णय भाऊ राम का प्रकरण (ऊपर) और संत राम का प्रकरण (ऊपर) का अवलंबन लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि हक शुफा का अधिकार असंवैधानिक और शुन्य है। यह सत्य है कि उपरोक्त दोनों निर्णयों के पश्चात इस न्यायालय द्वारा भाऊ राम का प्रकरण (ऊपर) और संत राम का प्रकरण (ऊपर) में प्रतिपादित सिद्धान्तों को आत्म प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य और अन्य के मामले में [(1986)2 एससीसी 249] और ए. रज्जाक सज्जनसाहब बागवान और अन्य बनाम इब्राहिम हाजी मोहम्मद हुसैन [(1998) 8 एससीसी 83] में पुनः दोहराया गया है। हालांकि हम वर्तमान प्रकरण में इस प्रश्न में प्रविष्ट नहीं होना चाहते है तथा वर्तमान प्रकरण में हमारा निणर्य दूसरे विवाद्यक के प्रकाश मे है, जो कि यह है कि क्या सामीप्य के आधार पर हक शुफा का दावा इस स्वीकृत तथ्य को ध्यान में रखते हुए पोषणीय था, कि अपीलार्थी क्रमांक 03 द्वारा अपीलार्थी क्रमांक 01 तथा अपीलार्थी क्रमांक 02 के साथ केवल वादग्रस्त सम्पत्ति के बेचान का करार किया गया था।

09. अब हम पक्षकारान के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाये गये दूसरे प्रश्नों पर विचार करते है। जैसा कि पूर्व में संकेत दिया गया है कि हमारे मत में प्रश्न यह है कि क्या ऐसी परिस्थितयों में सामीप्य के आधार पर हक शुफा का दावा पोषणीय है जबिक अपीलार्थी संख्या 03 द्वारा वादग्रस्त

सम्पत्ति के संबंध में अपीलार्थी क्रमांक 01 तथा अपीलार्थी क्रमांक 02 के साथ केवल वादग्रस्त सम्पत्ति के बेचान का करार किया गया था। हमारे मत में इस संदर्भ में उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री पोषणीय नहीं है।

10. स्वीकृत रूप से अपीलार्थी संख्या 03 तथा अपीलार्थी क्रमांक 01 तथा अपीलार्थी क्रमांक 02 के बीच में विक्रय हेतु पंजीकृत करार हुआ था। आगे बढ़ने से पहले, हम मुस्लिम विधि (संस्करण 19- मुल्ला) के अध्याय 13 को संदर्भित करते है। अध्याय 13 मुस्लिम विधि हक शुफा से संबंधित हैं। धारा 226 यह प्रावधानित करती है कि हक शुफा का अधिकार एक ऐसा अधिकार है जो कि किसी स्थावर संपत्ति के मालिक को प्राप्त है तथा जो अन्य स्थावर संपत्ति जिसे किसी अन्य व्यक्ति को बेचा जा चुका है उसे प्राप्त करने से संबंधित है। मुस्लिम विधि की धारा 232 भी सुसंगत है। प्रासंगिक होगी जो निम्नानुसार हैः

> "232- हकशुफा के अधिकार की उत्पत्ति केवल विक्रय से होती है-
>
> हक शुफा के अधिकार की उत्पत्ति केवल उसके वैध (ए) पूर्ण (बी) और वास्तविक/सदभाविक (सी) विक्रय से होती है। इसकी उत्पत्ति (हिबा) सदाकाह (धारा 171) वक्फ, विरासत,

वसीयत (डी) या पट्टा जहां यह शास्वत हो, (ई) ना ही इसकी उत्पत्ति किसी बंधक से होती है, चाहे बंधक सशर्त विक्रय के रूप मे हो (एफ), बल्कि अधिकारों की उत्पत्ति होगी यदि बंधक का मोचन हो जाता है। दो व्यक्तियों के बीच संपत्तियों को इस विकल्प के साथ कि विनिमय की अवधि में कोई भी स्वयं के जीवनकाल के दौरान उक्त वविनिमय को निरस्त कर स्वयं की संपत्ति वापिस पुनः प्राप्त कर सकता है, एक सशर्त विक्रय के समकक्ष होता है, ऐसा विनिमय स्वामित्व को समाप्त नहीं करता है और हक शुफा के अधिकार को उत्पन्न नहीं करता है। किन्तु इस विनिमय को निरस्त किये बिना किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाती है, (जी) तो उपरोक्त संव्यवहार विक्रय में परिवर्तित हो जाता है तथा हकशुफा का अधिकार अस्तित्व में आ जाता है (एच); इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पति द्वारा दहेज की एवज में स्वयं की पत्नी को किसी संपत्ति का अंतरण एक विक्रय है अतः हकशुफा के अधिकार के अधीन है (आई) दूसरी ओर, अवध के प्रधान न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है

कि उक्त संव्यवहार हिबा-बिल-वाज होने के कारण हकशुफा का प्रार्दुभाव नहीं हो सकता है(जे.)।

मुस्लिम विधि की धारा 226 और 232 के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि हकशुफा का अधिकार केवल तब अस्तित्व में आ सकता है जबकि एक स्थावर संपत्ति का स्वामी उक्त स्थावर संपत्ति को किसी अन्य व्यक्ति को विक्रय करता है। मुस्लिम कानून की धारा 232 यह भी इंगित करती है कि केवल विक्रय ही हकशुफा के अधिकार की उत्पत्ति करता है। धारा 226 और 232 के प्रावधानों के अनुसार यदि इस स्वतंत्र तथ्य की रोशनी में कि वतर्मान प्रकरण में स्वीकृत रूप से अपीलार्थी सं. 3 द्वारा अपीलार्थी सं. 1 व अपीलार्थी सं. 2 के पक्ष में वादग्रस्त संपत्ति का बेचान प्रभावी नहीं किया गया था, हमारे द्वारा यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि हकशुफा का दावा पोषणीय था, क्योंकि विक्रय के करार के संदर्भ में विक्रय विलेख के प्रभावी होने के अभाव में दावा प्रस्तुत किया जाना तथा ऐसा कोई वाद कारण विद्यमान नहीं था।

11. इस संदर्भ में संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 54 को भी उद्दरित किया जा सकता है। संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 54 यह प्रावधानित करती है कि विक्रय का करार स्वयं ही किसी स्थावर संपत्ति में कोई अधिकार या भार उत्पन्न नहीं करता है। अतः जहां पक्षकारान मात्र विक्रय करार में प्रविष्ट होते है, क्रेता के पक्ष में वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में

कोई अधिकार उत्पन्न नहीं होता है तथा स्वामित्व का अधिकार वैध रूप से विक्रेता से क्रेता को हस्तांतरित नहीं होता है और ऐसा नहीं होने से हकशुफा का प्रर्वतन का अधिकार भी उत्पन्न नहीं होता है अतः हमारे मत में ऐसे करार के आधार पर दायर किया गया हकशुफा का दावा वाद कारण रहित था, क्योंकि प्रत्यर्थीयों के पक्ष में हकशुफा का कोई अधिकार नहीं था जिसे कानून के तहत लागू किया जा सकता था। राधाकिशन लक्ष्मीनारायण तोशनीवाल, बनाम श्रीधर रामचंद्र अलशी और अन्य। [ए.आई.आर. 1960 एस.सी. 1368], में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जहां संपत्ति अंतरण अधिनियम लागू होता है, वहां संपत्ति का अंतरण केवल अधिनियम के प्रावधानों के अनुसरण में किया जाना चाहिए तथा संपत्ति अंतरण से संबंधित मुस्लिम विधि या कोई अन्य व्यक्तिगत विधि, क़ानून की अवहेलना नहीं कर सकता है। अतः जहां वादग्रस्त संपत्ति का स्वामित्व विधि के प्रावधानों के अनुसरण में स्थानान्तरित नहीं हुआ हो वहां हकशुफा का अधिकार प्रवर्तनीय नहीं होता। उपरोक्त विवेचनों की रोश्नी में हमारे मत में, इस स्वीकृत तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में अपीलार्थी संख्या 3 द्वारा अपीलार्थी संख्या 1 और 2 के साथ केवल विक्रय का करार किया गया था, प्रत्यर्थियों के पक्ष में हकशुफा का दावा लेशमात्र भी उत्पन्न नहीं होता है, जैसा कि पूर्व में उल्लेखित किया जा चुका है, विक्रय करार के आधार पर दायर किया गया ऐसा

हकाशुफा का दावा वाद कारण रहित है, क्योंकि प्रत्यर्थियों के पक्ष में विधिक प्रवर्तनीय हकशुफा का अधिकार विद्यमान नहीं था। हम इस तथ्य को भी अनदेखा नही करना चाहिए कि हक-शुफा के दावाकर्ता, जिसका एक मात्र उद्देश्य विधि द्वारा उसमें निहित अधिकारों के जरिये एक वैध संव्यवहार को विचलित करना मात्र हो उसके पक्ष में साम्य की उत्पत्ति नही होती जिस व्यक्ति के विरूद्ध हक शुफा का दावा किया गया है वह इस बात के लिये स्वतंत्र होता है कि वह हक शुफा कि विधि को किसी अन्य वैध साधन से परास्त कर सके जो कि क्रेता या विक्रेता द्वारा छल न हो तथा कोई व्यक्ति वैध साधनों के उपयोग से हक शुफा की विधि को परिवर्जित करने का अधिकारी हैा साधनों के उपयोग से हक शुफा की विधि को परिवर्जित करने का अधिकारी है।

12. इसके अतिरक्त भी यह पूर्णतया सुस्थापित स्थिति है कि हक शफ्ुा का अधिकार एक कमजोर प्रकृति का अधिकार है तथा न्यायालयों द्वारा उक्त अधिकार को बढ़ावा नहीं दिया जाता है तथा ऐसी स्थिति में हकशुफा के अधिकार के दावाकर्ता को न्यायालय द्वारा परिपाटी से हटकर सहायता प्रदान नहीं की जा सकती है। (देखें - राधाकृष्ण लक्ष्मीनारायण तोषणीवाल बनाम श्रीधर रामचन्द्र अलशी और अन्य। [एआईआर 1960 एससी 1368])।

13. ऐसी स्थिति में हमारे मत में पूर्व में किये गये विवेचन के अनुसरण में प्रत्यर्थीगण को हकशुफा का अधिकार प्राप्त नही था।

14. उपरोक्त कारणों से, वर्तमान अपील स्वीकार की जाती है तथा पक्षकारान द्वारा द्वितीय अपील में पारित निर्णय व डिक्री अपास्त की जाती है तथा तदनुसार प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत वाद खारिज किया जाता है, खर्चे का आदेश पारित नहीं किया जाता है।

15. यहां यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि अंततः विक्रय विलेख निष्पादित हो जाता है तो प्रत्यर्थीगण वादग्रस्त संपत्ति के संदर्भ में हकशुफा हेतु आवेदन करने हेतु स्वतंत्र रहेंगे यदि विधि के अधीन हकशुफा का दावा प्रस्तुत करने हेतु अनुज्ञात हो।

अपील स्वीकार की गयी।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मान सिंह चूण्डावत (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।